पूर्ण बेंच
माननीय न्यायमूर्ति आर. एस. नरूला, सी. एस. गुजराल, आर. एन. मित्तल जे. जे.
दुली चंद - याचिकाकर्ता
बनाम
हरियाणा राज्य और अन्य – उत्तरदाता
1974 की सिविल रिट याचिका संख्या 1232
5 सितंबर, 1975

पंजाब ग्राम पंचायत अधिनियम (1953 का IV) - धारा 95 (1) और 102 (2) - धारा 102 (2) के तहत एक खेत को हटाने के लिए राज्य सरकार की शक्ति - क्या उपायुक्त को प्रत्यायोजित किया जा सकता है - विधायी इरादा - विधानसभा बहस का संदर्भ - यदि अनुमति है।

यह अभनिर्धारित किया गया कि पंजाब ग्राम पंचायत अधिनियम, 1952 की धारा 95 की भाषा स्पष्ट है और उचित अधिकारियों को प्रत्यायोजन की शक्ति के लिए किसी भी अपवाद को स्वीकार नहीं करती है। जहां कहीं विधानमंडल चाहता है कि प्रत्यायोजन की शक्ति को कुछ सीमाओं के भीतर सीमित किया जाए या अधिनियम में नामित किसी विशेष प्राधिकारी द्वारा किसी विशेष कार्य को प्रत्यायोजित करने की शक्ति को धारा 95 के संचालन से बाहर रखा जाए, तो यह विशेष रूप से प्रदान किया गया है। वास्तव में, धारा 102 (2) के तहत सरकार के कार्यों को अनुभाग में ही निचले अधिकारियों को सौंपने के लिए विधायी नीति का आंतरिक प्रमाण है। जबकि उपधारा (2) के खंड (ए) से (सी) उन खंडों में निर्धारित वस्तुनिष्ठ परीक्षणों पर किसी पंच को हटाने की सरकार की शक्तियों से संबंधित हैं, जो संतुष्ट हैं, उप-धारा (2) के खंड (डी) और (ई) के तहत हटाने की शक्ति सरकार की राय पर आधारित है। इन खण्डों में, अर्थात् खण्ड (घ) और (ङ) में यह विशेष रूप से कहा गया है कि एक पंच, जो सरकार की राय में "या उस अधिकारी का जिसे सरकार ने हटाने की अपनी शक्तियां प्रत्यायोजित की हैं" कर्तव्यों के निर्वहन में कदाचार का दोषी रहा है या जिसका पद पर बने रहना "सरकार या उस अधिकारी की राय में है जिसे सरकार ने अपनी शक्तियां प्रत्यायोजित की हैं। जनता के हित में निष्कासन अवांछनीय है और यदि विधायी आशय यह था कि किसी पंच को हटाने के लिए धारा 102 की उपधारा (2) के तहत शक्ति प्रत्यायोजित किए जाने की उम्मीद नहीं है, तो उस अधिकारी को कोई संदर्भ नहीं दिया जा सकता था जिसे सरकार ने उसी धारा के खंड (डी) और (ई) में हटाने की अपनी शक्ति प्रत्यायोजित की है। यह स्थापित कानून है कि जब भी सरकार को किसी संविधि के माध्यम से कोई शक्ति प्रत्यायोजित की जाती है, तो ऐसा करने के लिए सांविधिक अधिकार का प्रयोग करते हुए, प्रतिनिधि सरकार के रूप में कार्य करता है और ऐसे प्रत्यायोजित प्राधिकार का प्रयोग करते हुए उसके द्वारा की गई कोई कार्रवाई या उसके द्वारा पारित आदेश को स्वयं सरकार का आदेश माना जाता है। इस प्रकार, अधिनियम की धारा 102 (2) के तहत एक पंच को हटाने की राज्य सरकार की शक्ति धारा 95 के तहत उपायुक्त को प्रत्यायोजित की जा सकती है। (पैरा 4, 5 और 13)।

(पैरा 10)

माननीय न्यायमूर्ति आर एन मित्तल और माननीय न्यायमूर्ति मनमोहन सिंह गुजराल की खंडपीठ द्वारा 22 नवंबर, 1974 को मामले में शामिल कानून के एक महत्वपूर्ण प्रश्न पर निर्णय के लिए पूर्ण पीठ को मामला भेजा गया। माननीय मुख्य न्यायाधीश श्री आरएस नरूला, माननीय न्यायमूर्ति आर एन मित्तल और माननीय न्यायमूर्ति श्री मन मोहन सिंह गुजराल की पूर्ण पीठ ने संदर्भित प्रश्न पर निर्णय लेने के बाद मामले को कानून के अनुसार निर्णय लेने के लिए 5 सितंबर, 1975 को खंडपीठ को वापस कर दिया।

भारत के संविधान के अनुच्छेद 226/227 के तहत रिट याचिका:-

i. याचिकाकर्ता की याचिका स्वीकार की जाए;

ii. भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत सर्टिओररी की प्रकृति में एक रिट जारी की जाए, जिसमें अनुबंध पी-1, पी-3 और पी-6 को अवैध, शून्य, गलत, अन्यायपूर्ण घोषित करते हुए निरस्त किया जाए; शक्तियों से अधिक और याचिकाकर्ता के खिलाफ निष्क्रिय;

iii. मामले का रिकॉर्ड भी तलब किया जा सकता है;

iv. कि अनुबंध पी -3 में निहित निलंबन आदेश के संचालन पर अंतरिम रोक लगाई जाए;

v. कि प्रतिवादी संख्या 5 को आरोप-पत्र अनुलग्नक 'पी -1' के आधार पर किसी भी जांच से रोका जाए;

vi. कि कोई अन्य रिट, आदेश या निर्देश जो यह माननीय न्यायालय मामले की परिस्थितियों में उचित समझे, पारित किया जाए; ,

vii. इस रिट याचिका की लागत याचिकाकर्ता को दी जाए।

याचिकाकर्ता की ओर से गोपी चंद, एडवोकेट।

एच.एन. मेहतानी, डी.ए.जी. उत्तरदाताओं।

निर्णय

मुख्य न्यायमूर्ति आर. एस. नरूला,

1) इस पूर्ण पीठ को संदर्भित प्रश्न है:-

> "क्या राज्य सरकार पंजाब ग्राम पंचायत अधिनियम, 1952 की धारा 95 की उप-धारा (1) द्वारा प्रदत्त शक्तियों का प्रयोग करते हुए, उक्त अधिनियम की धारा 102 की उप-धारा (2) के तहत प्रयोग की जाने वाली अपनी शक्तियों को उपायुक्तों को उनके अधिकार क्षेत्र के भीतर ग्राम पंचायतों के संबंध में सौंप सकती है।"

उपरोक्त उद्धृत प्रश्न को जन्म देने वाले तथ्यों और परिस्थितियों में जाना अनावश्यक प्रतीत होता है क्योंकि हमारे पास संदर्भित शुद्ध कानूनी प्रश्न बड़ी संख्या में रिट याचिकाओं में उठता है और हमारे उत्तर से उन सभी मामलों को नियंत्रित करने की उम्मीद की जाती है।

2) पंजाब ग्राम पंचायत अधिनियम, 1952 की धारा 1,02, जैसा कि हरियाणा राज्य पर लागू है और अद्यतन रूप में संशोधित (इसके बाद अधिनियम कहा जाता है) निम्नानुसार है:

> "(1) उपायुक्त जांच के दौरान किसी पंच को किसी भी कारण से निलंबित कर सकता है, जिसके लिए उसे हटाया जा सकता है, और उसे उस अवधि के दौरान उक्त निकाय के किसी भी कार्य या कार्यवाही में भाग लेने से रोक सकता है और उसे उक्त निकाय के रिकॉर्ड, धन या किसी भी संपत्ति को इस संबंध में अधिकृत व्यक्ति को सौंपने का आदेश दे सकता है।
>
> (3) सरकार, ऐसी जांच के बाद, जो आईआईटी उचित समझे, किसी भी पंच को हटा सकती है-
>
> > (a) धारा 5 की उप-धारा (5) में उल्लिखित किसी भी आधार पर;
> > (b) जो कार्य करने से इनकार करता है, या कार्य करने में असमर्थ हो जाता है, या उसे दिवालिया घोषित कर दिया जाता है;
> > (c)जो उचित कारण के बिना, ग्राम पंचायत या अदलती पंचायत की बैठकों से लगातार दो महीने से अधिक समय तक अनुपस्थित रहता है, जैसा भी मामला हो;
> > (d) जो सरकार की राय में या उस अधिकारी की राय में, जिसे सरकार ने हटाने की अपनी शक्ति प्रत्यायोजित की है, अपने पिछले या वर्तमान कार्यकाल के दौरान अपने कर्तव्यों के निर्वहन में कदाचार का दोषी रहा है;

(e) जिसका पद पर बने रहना, सरकार की राय में, या उस अधिकारी का जिसे [सरकार ने हटाने की अपनी शक्तियों को प्रत्यायोजित किया है, जनता के हित में अवांछनीय है।

स्पष्टीकरण- खंड (घ) में 'कदाचार' शब्द में पर्याप्त कारण के बिना सरपंच की विफलता शामिल है:-

(i) ऐसा करने के लिए किसी भी न्यायालय के आदेश की प्राप्ति के दो सप्ताह के भीतर किसी मामले की न्यायिक फाइल प्रस्तुत करना;

(j) किसी प्रशासनिक या न्यायिक मामले में ग्राम पंचायत के आदेश की एक प्रति, उसके द्वारा निर्धारित, उसके लिए वैध आवेदन प्राप्त होने के दो सप्ताह के भीतर प्रदान करना।

(4) कोई व्यक्ति, जिसे उपधारा (2) के खंड (ए) या (सी) के तहत हटा दिया गया है, उसे ऐसी अवधि के लिए फिर से चुनाव के लिए अयोग्य ठहराया जा सकता है जो पांच साल से अधिक नहीं हो जैसा कि सरकार तय करे।

(5) एक व्यक्ति, जिसे उप-धारा (2) के खंड (बी), (डी) या (ई) के तहत हटा दिया गया है, उसे हटाने की तारीख से पांच साल की अवधि के लिए फिर से चुनाव के लिए अयोग्य घोषित किया जाएगा; और एक व्यक्ति, जिसे 1 सितंबर, 1965 को या उसके बाद उक्त खंडों में से किसी के तहत हटा दिया गया था, पंजाब ग्राम पंचायत (हरियाणा संशोधन) अधिनियम, 1971 के लागू होने के बाद ऐसी अवधि के दौरान फिर से चुनाव के लिए अयोग्य हो जाएगा, जो उसके निष्कासन की तारीख से पांच साल की अवधि के भीतर आता है।

अधिनियम की धारा 95, जिसमें अधिनियम द्वारा प्रदत्त शक्तियों के प्रत्यायोजन का अधिकार शामिल है, निम्नलिखित शर्तों में है:-

(1) सरकार, अधिसूचना द्वारा, इस अधिनियम के अधीन अपनी सभी या किन्हीं शक्तियों को बनाने की शक्ति के अलावा प्रत्यायोजित कर सकेगी। नियम, उपायुक्त या उप-विभागीय अधिकारी के लिए, जैसा भी मामला हो, या निदेशक के लिए।

(2) निदेशक सरकार की पूर्व अनुमति से अपनी कोई भी शक्ति उसे सौंपे गए अधिकारों के अलावा किसी ऐसे अधिकारी को प्रत्यायोजित कर सकता है जो जिला पंचायत अधिकारी के पद से नीचे न हो।

(3) मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट अपनी कोई भी शक्ति प्रथम श्रेणी के न्यायिक मजिस्ट्रेट को सौंप सकता है।

(4) जिला न्यायाधीश अपनी कोई भी शक्ति प्रथम श्रेणी के अधीनस्थ न्यायाधीश को प्रत्यायोजित कर सकता है।

(5) कलेक्टर अपनी किसी भी शक्ति को प्रथम श्रेणी के सहायक कलेक्टर को प्रत्यायोजित कर सकता है।

(6) उपायुक्त या उप-विभागीय अधिकारी, जैसा भी मामला हो, नियंत्रण की अपनी शक्तियों में से किसी को भी किसी ऐसे अधिकारी को सौंप सकता है जो अतिरिक्त सहायक आयुक्त के पद से नीचे नहीं हो या जिला पंचायत अधिकारी को सौंप सकता है:

बशर्ते कि धारा 102 में निर्दिष्ट शक्ति उपायुक्त द्वारा प्रत्यायोजित नहीं की जाएगी।

अधिनियम की धारा 95 की उपधारा (1) द्वारा सरकार को प्रदत्त शक्तियों का प्रयोग करते हुए धारा 102 की उपधारा (2) के अधीन किसी पंच को हटाने और उस धारा की उपधारा (3) के अंतर्गत ऐसे व्यक्ति को अयोग्य घोषित करने की सरकार की शक्तियां उपायुक्तों को हरियाणा सरकार की अधिसूचना सं

2009 द्वारा उनके अधिकार क्षेत्र के भीतर ग्राम पान-चायतों के संबंध में प्रत्यायोजित की गई हैं। एचपी-14-69/4464, दिनांक 19 मार्च, 1969 (रिट याचिका का अनुलग्नक पृष्ठ 6)।

3) याचिकाकर्ता के विद्वान वकील का तर्क है कि धारा 95 (1) को अमान्य और निष्क्रिय होने के रूप में निरस्त किया जा सकता है क्योंकि:

इसके प्रावधान अधिनियम की नीति के खिलाफ जाते हैं; और

पंच को हटाने की शक्ति अर्ध-न्यायिक प्रकृति की होने के नाते विधायिका द्वारा प्रदान की गई एक व्यक्तिगत शक्ति है। सरकार और ऐसी शक्तियों को कानूनी रूप से प्रत्यायोजित नहीं किया जा सकता है, और ऐसे प्रतिनिधिमंडल को अधिकृत करने वाले प्रावधान को स्वयं खराब घोषित किया जाना चाहिए।

4) धारा 95 की भाषा स्पष्ट है और हमारी राय में उचित अधिकारियों को प्रदत्त प्रत्यायोजन की शक्ति के किसी भी अपवाद को स्वीकार नहीं करती है। यह महत्वपूर्ण है कि जहां भी विधानमंडल चाहता है कि प्रत्यायोजन की शक्ति को कुछ सीमाओं के भीतर सीमित किया जाए या अधिनियम में नामित किसी विशेष प्राधिकारी द्वारा किसी विशेष कार्य को प्रत्यायोजित करने की शक्ति को धारा 95 के संचालन से बाहर रखा जाए, यह विशेष रूप से प्रदान किया गया है। उदाहरण के लिए, धारा 95 की उप-धारा, (6) उपायुक्त को नियंत्रण की अपनी किसी भी शक्ति को एक अतिरिक्त सहायक, आयुक्त या जिला पंचायत अधिकारी के पद से नीचे के अधिकारी को सौंपने के लिए अधिकृत करती है। [धारा 102 की उप-धारा (1) उपायुक्त को जांच के दौरान एक पंच को निलंबित करने के लिए अधिकृत करती है]। उपधारा (8) के परंतुक में उपायुक्त की प्रत्यायोजन की शक्ति को प्रतिबंधित किया गया है ताकि अधिनियम की धारा 102 के तहत अपनी शक्तियों को प्रत्यायोजित करने के अधिकार को इसके दायरे से बाहर रखा जा सके, अर्थात किसी पंच को निलंबित करना या अपने प्रत्यायोजित अधिकार का प्रयोग करते हुए किसी को हटाना। अधिनियम के अधीन अपनी किसी भी शक्ति को प्रत्यायोजित करने के लिए धारा 95 की उप-धारा (1) के तहत सरकार को प्रदत्त अधिकार विधायिका द्वारा केवल एक अपवाद, अर्थात् नियम बनाने की शक्ति और किसी अन्य अपवाद के अधीन प्रदान नहीं किया गया है।

5) सरकार को कोई भी शक्तियां प्रदान करने वाले अधिनियम के अन्य प्रावधान अधिनियम की धारा 95-A, 99 (2), 99-A, 100, 108 और 105 में निहित हैं। धारा 95-A उस धारा में निहित प्रक्रिया के अनुसार ग्राम पंचायतों के पंचों के आम चुनाव आदि आयोजित करने की सरकार की शक्ति को संदर्भित करती है। धारा 99 में प्रावधान है कि यदि कोई ग्राम पंचायत अधिनियम द्वारा या उसके तहत या किसी अन्य कानून के तहत उस पर लगाए गए न्यायिक कार्य के अलावा किसी अन्य कर्तव्य के पालन में चूक करती है, तो उपायुक्त उसके प्रदर्शन के लिए एक अवधि निर्धारित कर सकता है, और चूक के मामले में किसी भी व्यक्ति को इसे करने के लिए नियुक्त कर सकता है। उस धारा की उपधारा (2) में कहा गया है कि यदि सरकार की राय में कोई ग्राम पंचायत अपनी संपत्ति का प्रशासन करने में विफल रही है या अन्यथा अक्षम है, तो सरकार ग्राम पंचायत के लिए और उसकी ओर से ऐसी संपत्ति का प्रशासन करने के लिए एक व्यक्ति को नियुक्त करेगी, और सरकार किसी भी समय ऐसी व्यवस्था को समाप्त कर सकती है। धारा 99-ए सरकार को किसी भी भूमि के प्रबंधन को अधिसूचना द्वारा अपने हाथ में लेने के लिए अधिकृत करती है। (ख) यदि सरकार की राय में जनहित में या पंचायत द्वारा धारित या प्रबंधित ऐसी भूमि का समुचित प्रबंधन सुनिश्चित करना आवश्यक हो तो 20 वर्ष से अधिक की अवधि के लिए ग्राम पंचायतों का गठन किया गया है। धारा 100 सरकार को किसी ग्राम पंचायत की कार्यवाही के रिकॉर्ड को बुलाने और उसकी जांच करने के लिए अधिकृत करती है ताकि वह उसमें पारित किसी कार्यकारी आदेश की वैधता या औचित्य को संतुष्ट कर सके और आगे सरकार को ऐसे किसी आदेश की पुष्टि करने, संशोधित करने या रद्द करने का अधिकार देता है। अधिनियम की धारा 101 सरकार को अधिनियम के अनुरूप नियम बनाने की शक्ति प्रदान करती है। यह वह शक्ति है जिसे विशेष रूप से धारा 95 की उप-धारा (1) के संचालन से बाहर रखा गया है। इस फैसले

के शुरुआती हिस्से में धारा 102 के प्रावधानों का पहले ही उल्लेख किया जा चुका है। धारा 103 सरकार को किसी ग्राम पंचायत को निलंबित करने या उसकी जगह लेने के लिए अधिकृत करती है यदि सरकार की राय में कोई पंचायत अधिनियम या किसी अन्य अधिनियम द्वारा या उसके तहत उस पर लगाए गए कर्तव्यों के पालन में अक्षम है या लगातार चूक करती है, या अपनी शक्तियों से अधिक या दुरुपयोग करती है या उचित स्वच्छता बनाए रखने में विफल रहती है। आदि। धारा 105 पंचायत से संबंधित किसी भी धन या संपत्ति के नुकसान, बर्बादी या दुरुपयोग के लिए सदस्यों के दायित्व से संबंधित है। उस धारा की उपधारा (एए) में प्रावधान है कि सरकार कर सकती है। या तो किसी भी समय अपने स्वयं के प्रस्ताव पर, या निर्धारित अवधि के भीतर उस निमित्त प्राप्त आवेदन पर, ऐसी किसी भी कार्यवाही का रिकॉर्ड मांगें जिसमें पंचायत के उप निदेशक ने ऐसे आदेश की वैधता या औचित्य के बारे में खुद को संतुष्ट करने के उद्देश्य से उप-धारा (3) के तहत आदेश पारित किया है और उसके संबंध में ऐसा आदेश पारित किया है जो सरकार उचित समझे। यह स्थापित कानून है कि जब भी किसी संविधि द्वारा सरकार को प्रत्यायोजित कोई शक्ति सांविधिक प्राधिकार का प्रयोग करते हुए प्रत्यायोजित की जाती है, तो प्रतिनिधि सरकार के रूप में कार्य करता है और उसके द्वारा की गई कोई कार्रवाई, या ऐसे प्रत्यायोजित प्राधिकार का प्रयोग करते हुए उसके द्वारा पारित आदेश को स्वयं सरकार का आदेश माना जाता है। रूप चंद बनाम इस मामले में इस बिंदु पर उच्चतम न्यायालय का आधिकारिक निर्णय। पंजाब राज्य और दूसरा (1), इस विषय पर निर्णायक है। यह भी अच्छी तरह से तय है कि एक वैधानिक प्रावधान की वैधता और वैधता के पक्ष में एक धारणा है और उस धारणा का खंडन करने का बोझ उस व्यक्ति पर है जो प्रावधान को अमान्य या बुरा या असंवैधानिक होने के रूप में चुनौती देता है [बरहम दत्त और अन्य बनाम पीपुल्स को-ऑपरेटिव ट्रांसपोर्ट सोसाइटी लिमिटेड, नई दिल्ली और अन्य (2)]।

6) जिस आधार पर श्री पी गोपी चंद ने प्रस्तुत किया है कि अधिनियम की धारा 95 (1) अधिनियम की नीति के विपरीत है और विधायी इरादे के विपरीत है, वह इस न्यायालय की एक खंडपीठ (मेहर सिंह, सीजे, जैसा कि वह था, और मैं) के फैसले में कुछ टिप्पणियां हैं। सिंह वी। उपायुक्त, फिरोजपुर और अन्य, (3) और पंजाब विधानमंडल में दिए गए कुछ भाषण, जब इसे 1952 में संयुक्त पंजाब के तत्कालीन विधानमंडल द्वारा पारित किया गया था, उस समय प्रधान अधिनियम के विधेयक में खंड पर विचार करते समय। राम दित्तो सिंह के मामले (सुप्रा) में मेहर सिंह, सीजे और मेरे सामने जो सवाल उठा वह यह था कि क्या धारा 102 की उप-धारा (1) के तहत उपायुक्त द्वारा एक पंच को निलंबित किया जा सकता है या नहीं, जबकि उस धारा की उपधारा (2) के तहत सरकार द्वारा पहले जांच का आदेश दिया गया था। उस मामले में जांच का आदेश उप-विभागीय अधिकारी द्वारा दिया गया था और खंड विकास और पंचायत अधिकारी द्वारा आयोजित किया गया था। उस जांच की रिपोर्ट पर सरपंच का स्पष्टीकरण प्राप्त किया गया था और संतोषजनक नहीं पाए जाने पर उपायुक्त के आदेश से सरपंच को निलंबित कर दिया गया था। निलंबन का आदेश रिट याचिका में लागू किया गया था, जिसे विद्वान एकल न्यायाधीश ने इस आधार पर खारिज कर दिया था कि सरपंच के पास अभी भी उसके खिलाफ लगाए गए आरोपों के खिलाफ कारण बताने का अवसर था, लेकिन अपील में इस संक्षिप्त आधार पर अनुमति दी गई थी कि सरपंच के खिलाफ प्रारंभिक जांच सरकार के आदेशों के तहत शुरू नहीं की गई थी। और जहां तक धारा 1102 की उप-धारा (1) और (2) को एक साथ पढ़ा जाना चाहिए, यह केवल सरकार द्वारा आदेशित जांच के दौरान ही है कि उपायुक्त के पास उप-धारा (1) के तहत एक पंच या सरपंच को निलंबित करने की शक्ति है। यह माना गया कि यदि उप-धारा (2) के तहत सरकार द्वारा कोई जांच का आदेश नहीं दिया जाता है, तो उप-धारा (1) के तहत निलंबित करने की उपायुक्त की शक्ति प्रभावी नहीं हो जाती है, क्योंकि उस धारा के प्रावधानों में उप-धारा (2) में निर्दिष्ट पंच के खिलाफ किसी भी जांच की परिकल्पना नहीं की गई है, जिसके दौरान एक

उपायुक्त एक पंच के निलंबन का आदेश दे सकता है। यह उस संदर्भ में था कि कानून को स्पष्ट शब्दों में 'उपरोक्त प्रभाव' में रखने के बाद, मेहर सिंह, सीजे, नीचे के रूप में अवलोकन करने के लिए आगे बढ़े:-

> "जैसा कि मैंने पहले ही कहा है, दोनों उप-धाराओं को एक साथ पढ़ा जाना चाहिए, और इसका स्पष्ट परिणाम यह है कि यह केवल तभी होता है जब सरकार ने किसी पंच के खिलाफ उप-धारा (2) के तहत जांच का आदेश दिया है या शुरू किया है, तभी संबंधित उपायुक्त को उप-धारा (1) के तहत उस पंच को निलंबित करने की शक्ति है। वह उपधारा (2) के तहत सरकार द्वारा आदेश नहीं दी गई या शुरू नहीं की गई जांच के परिणामस्वरूप उसे निलंबित नहीं कर सकता है। विधायिका ने दो उप-धाराओं को इस तरह से तैयार किया है कि वे किसी पंच के खिलाफ जांच का आदेश देने या शुरू करने की शक्ति अकेले सरकार के पास छोड़ दें। इसका कारण स्पष्ट है, क्योंकि जहां तक उस निर्वाचित निकाय का संबंध है, एक पंच एक निर्वाचित स्थानीय निकाय का सदस्य होता है और अपने निर्वाचन क्षेत्र का प्रतिनिधि होता है, और विधायिका का इरादा ऐसे स्थानीय निकायों के निर्वाचित सदस्यों के खिलाफ जांच शुरू करके ऐसे निर्वाचित निकायों में हस्तक्षेप स्थानीय अधिकारियों के हाथों में छोड़ने का नहीं था। निलंबन की शक्ति पहले पंचायत निदेशक के पास थी और यह केवल हाल ही में किया गया संशोधन है जिसने एक उपायुक्त को यह दिया है, लेकिन यह केवल तब है जब सरकार ने धारा 102 की उपधारा (2) में उल्लिखित अनियमितताओं या उल्लंघनों के लिए पंचायत के निर्वाचित सदस्य के कार्यकाल में हस्तक्षेप करने का अधिक गंभीर निर्णय लिया है। आदेश देने या जांच शुरू करने के लिए उठाए जाने वाले प्रारंभिक कदम को विधायिका द्वारा उच्चतम स्तर पर केवल सरकार तक ही सीमित रखा गया है, और यह एक ठोस नीति के रूप में किया गया है ताकि निचले स्तरों पर राज्य में ऐसी निर्वाचित संस्थाओं के साथ हस्तक्षेप को रोका जा सके। उपधारा (2) के अधीन जांच का आदेश देने या शुरू करने का मन बनाने के उद्देश्य से सरकार द्वारा किसी पंचायत के मामलों की कुछ प्रारंभिक जांच या जांच की जा सकती है, और यह केवल तभी होता है जब वह उस उप-धारा के तहत कार्य करने का मन बना लेता है कि उप-धारा (1) के तहत उपायुक्त के आदेश का पालन किया जा सकता है। लेकिन इस तरह की प्रारंभिक जांच एक उपायुक्त को उप-धारा (1) के तहत कार्रवाई करने की शक्ति नहीं देती है, जब तक कि उप-धारा (2) के तहत जांच के लिए सरकार द्वारा आदेश नहीं दिया गया हो।"

7) यह सीधे देखा जा सकता है कि जिस प्रश्न का उत्तर देने के लिए बुलाया जाता है, वह न तो राम दित्ता सिंह के मामले (सुप्रा) में उठा था और न ही उस पीठ के समक्ष इसे पूछा, तर्क या चर्चा की गई थी, जिसने उस मामले का फैसला किया था, जिसका मैं सदस्य था। उक्त निर्णय के उपर्युक्त उद्धरण में जांच शुरू करने के निर्णय के संबंध में प्रारंभिक कदम के बारे में की गई टिप्पणी जो विधायिका द्वारा अपने उच्चतम स्तर पर केवल सरकार तक ही सीमित थी, कानून से संबंधित थी क्योंकि यह उस समय कायम थी और इस तथ्य पर जोर देने के लिए की गई थी कि सरकार द्वारा आदेशित जांच के परिणामस्वरूप और उसके दौरान निलंबन का आदेश दिया गया था। सरकार द्वारा लिए जाने वाले प्रारंभिक निर्णय की तुलना में यह कुछ हद तक महत्वहीन था। उक्त प्रावधान को एक ठोस नीति के रूप में अधिनियमित किया गया था, मेरी राय में, यह कहने का अर्थ यह नहीं है कि यदि शक्ति राज्य सरकार से कम किसी प्राधिकारी में निहित की गई थी, तो यह अधिनियम में कहीं भी पाई जाने वाली किसी भी नीति के विपरीत होगा। निचले स्तर पर राज्य में निर्वाचित संस्थाओं के साथ हस्तक्षेप के बारे में टिप्पणी केवल निरर्थक है और डिवीजन बेंच के

समक्ष जो बिंदु था, उसके निर्णय के लिए न तो आवश्यक था और न ही प्रासंगिक था। राम दित्ता सिंह के मामले से उपरोक्त उद्धृत अंश की अंतिम पंक्तियों में जो कहा गया है कि उपायुक्त के पास उप-धारा (1) के तहत पंच को निलंबित करने की कोई शक्ति नहीं है, जबकि उपधारा (2) के तहत जांच के लिए "सरकार द्वारा" आदेश नहीं है, अधिनियम की धारा 95 का नोटिस लिए बिना धारा 102 के प्रावधान से संबंधित है। वास्तव में राम दित्ता सिंह के मामले में धारा 102 के तहत सरकार की शक्ति के कानूनी प्रत्यायोजन की वैधता और सीमा का सवाल ही नहीं उठता। इसलिए, उस निर्णय में कही गई कोई भी बात वास्तव में हमें उस प्रश्न का उत्तर देने के लिए कोई प्रकाश नहीं दे सकती है जिसे इस निर्णय के शुरुआती वाक्य में उद्धृत किया गया है। यह भी महत्वपूर्ण है कि मेहर सिंह, सीजे, (जो राम दित्ता सिंह के मामले में डिवीजन बेंच के फैसले के लेखक थे) ने खुद यह स्पष्ट किया कि सरकार की शक्ति उपायुक्त को सौंपी जा सकती है, जबकि उजागर सिंह बनाम इस न्यायालय की अगली पूर्ण पीठ की अध्यक्षता की जा सकती है। आई.एल.आर. ((1969)1 पी.बी. और हैरी. 69. उस मामले में फैसला भी विद्वान मुख्य न्यायाधीश ने ही लिखा था। उस फैसले के दौरान मेहर सिंह, सीजे ने नीचे कहा:-

> “अधिनियम की धारा 95 के अनुसार, सरकार पंचायत निदेशक के अलावा एक जिले के उपायुक्त को अधिनियम के तहत अपनी शक्तियां प्रत्यायोजित कर सकती है। अत, इस उपबंध को ध्यान में रखते हुए सरकार अधिनियम की धारा 102 की उपधारा (2) के अधीन अपनी शक्तियां एक उपायुक्त को प्रत्यायोजित कर सकती है, यद्यपि वास्तव में उसने अपनी शक्तियां राज्य के किसी जिले के उपायुक्त को नहीं बल्कि पंचायत निदेशक, केन्द्र के एक अधिकारी को प्रत्यायोजित की हैं जो पंचायत विभाग का प्रमुख है।“

इसके बाद धारा 102 की उपधारा (1) के संशोधन के लिए फैसले में संदर्भ दिया गया है, जिसके तहत निलंबित करने की शक्ति (जो मूल रूप से पंचायतों के निदेशक में निहित थी) उपायुक्त में निहित थी। पूर्ण पीठ द्वारा उस संशोधन को उचित ठहराया गया था क्योंकि मामलों की संख्या और उस संबंध में शामिल काम की मात्रा को देखते हुए इसे लागू किया गया था। यह स्पष्ट रूप से निर्धारित करने के बाद ही था कि सरकार धारा 102 की उप-धारा (2) के तहत अपनी शक्ति को धारा 95 के तहत एक उपायुक्त को सौंप सकती है कि उजागर सिंह के मामले (सुप्रा) में मेहर सिंह, सीजे द्वारा निम्नलिखित टिप्पणियां की गई थीं:-

> "धारा 95 के तहत उपायुक्त को अधिनियम के तहत अपनी शक्तियों को सौंपने की शक्ति के बावजूद, सरकार ने धारा 102 की उप-धारा (2) के तहत अपनी शक्ति के संबंध में ऐसा करने का विकल्प नहीं चुना है। इसने यह शक्ति केवल पंचायत निदेशक, विभाग में शीर्ष रैंक के अधिकारी को प्रत्यायोजित की है। इसलिए, जबकि उपायुक्त को इस तरह का प्रतिनिधिमंडल संभव है, सरकार की कार्रवाई स्वयं इस निष्कर्ष का समर्थन करती है कि उसने विधायिका की नीति पर ध्यान दिया है कि ऐसी शक्तियां जिला अधिकारियों को नहीं सौंपी जानी हैं ताकि वे पंचायतों के रूप में स्थानीय निकायों के कामकाज में हस्तक्षेप न कर सकें।“

पूर्ण पीठ की उपर्युक्त उद्धृत टिप्पणियों में "विधायिका की नीति" का संदर्भ है जिसने श्री गोपी चंद द्वारा हमारे समक्ष संबोधित परिष्कृत तर्क को जन्म दिया है। यह बहुत महत्वपूर्ण है कि विधायिका की तथाकथित नीति का उल्लेख करते हुए विद्वान मुख्य न्यायाधीश ने फिर से इस तथ्य पर जोर दिया कि "जबकि उपायुक्त को इस तरह का प्रतिनिधिमंडल संभव है", अब हमारे सामने यह तर्क देने की मांग की जा रही है कि सरकार द्वारा अधिनियम की धारा 102 (2) के तहत उपायुक्त को अपनी शक्तियों का

ऐसा प्रत्यायोजन संभव नहीं है और शून्य होगा। यह तर्क देना उजागर सिंह के मामले में इस न्यायालय की पूर्ण पीठ द्वारा दिए गए फैसले के विपरीत सीधे तौर पर तर्क देना है। उजागर सिंह के मामले में फैसले के अवलोकन से ऐसा प्रतीत होता है कि विधायिका की नीति के बारे में कोई तर्क नहीं था। वास्तव में किसी के द्वारा भी आगे बढ़ाया गया है, और यह कि निर्णय में उसी का संदर्भ विधायिका की सामान्य सामान्य सामान्य नीति के लिए है ताकि जिला स्तर या उससे नीचे के अधिकारियों को महत्वपूर्ण सरकारी कार्यों के प्रत्यायोजन से बचा जा सके। तथापि, ऐसी कोई सामान्य नीति नहीं है। इस तरह की नीति शक्ति की प्रकृति, प्रतिनिधिमंडल की सीमा, आधिकारिक पदानुक्रम में प्रतिनिधि की स्थिति, मामलों की संख्या और इसमें शामिल काम की मात्रा, और कई अन्य चीजों को ध्यान में रखते हुए कानून से कानून में भिन्न होने के लिए बाध्य है। पूरे राज्य में सरपंचों और पंचों के खिलाफ जांच के मामले में शामिल मामलों की संख्या और काम की मात्रा को ध्यान में रखते हुए, राज्य सरकार के लिए किसी पंच या सरपंच के आचरण की जांच का आदेश देने के प्रश्न पर उचित रूप से अपना दिमाग लगाना असंभव होगा, और हमें यह उचित प्रतीत होता है कि उक्त शक्ति प्रमुख को प्रत्यायोजित की गई है। जिले का कार्यकारी अधिकारी जो आमतौर पर अपने जिला प्रशासन और अपने अधिकार क्षेत्र के भीतर निर्वाचित निकायों के कामकाज के बारे में बेहतर जानने के लिए बाध्य होता है। राम दित्ता सिंह के मामले में डिवीजन बेंच के फैसले और उजागर सिंह के मामले में पूर्ण पीठ के फैसले पर सावधानीपूर्वक विचार करने के बाद, हमारा दृढ़ मत है कि दोनों मामलों में से किसी में भी यह नहीं माना गया है कि अधिनियम की धारा 102 (2) के तहत सरकार की शक्ति उपायुक्त को अधिनियम की धारा 95 (1) के तहत नहीं सौंपी जा सकती है।

8) मामले की सुनवाई के दौरान हमारे इस कथन की अभिव्यक्ति ने श्री गोपी चंद को उजागर सिंह के मामले में मेहर सिंह, सी.जे. की टिप्पणियों में विधायी नीति के संदर्भ से उत्पन्न निराशा के तर्क के लिए प्रेरित किया। उन्होंने सरदार अच्छर सिंह छीना, एम.एल.ए. द्वारा उठाए गए निम्नलिखित प्रश्नों और 21 नवंबर, 1952 को आयोजित पंजाब विधानसभा सत्र में स्थानीय सरकार मंत्री द्वारा दिए गए उत्तरों का उल्लेख किया:-

सरदार अच्छर सिंह छीना

इसके अलावा, इस विधेयक में यह प्रावधान किया गया है कि पंचायत अधिकारी के पास लोगों द्वारा चुने गए पंचों को हटाने की शक्ति होगी। दूसरे शब्दों में, इसका अर्थ यह है कि ये पंचायत अधिकारी उन पंचों को हटा देंगे जिन्हें वे पसंद नहीं करते हैं, मैं सरकार से पूछना चाहता हूं कि ग्राम सभा द्वारा पंचों के चुनाव में परिस्थितियों में क्या अर्थ है?

स्थानीय सरकार के मंत्री- मैं निवेदन करता हूं कि सरकार को छोड़कर कोई भी पंचायत के पंचों को हटाने के लिए सक्षम नहीं होगा। केवल सरकार के पास यह शक्ति होगी। माननीय सदस्य कुछ गलत धारणा में हैं।

सरदार अच्छर सिंह छीना- मैं माननीय मंत्री जी से यह जानना चाहता हूं कि क्या पंचायत अधिकारी सरकार के प्रतिनिधि नहीं हैं, सरकार से उनका क्या तात्पर्य है?

स्थानीय सरकार के मंत्री- मैं दोहराता हूं कि केवल सरकार ही उन्हें हटाने में सक्षम होगी। पंचायत अधिकारी ऐसा करने के लिए अधिकृत नहीं होंगे।

सरदार अच्छर सिंह छीना- माननीय मंत्री को यह महसूस करना चाहिए कि इस मामले में निदेशक या सहायक निदेशक का मतलब सरकार होगा क्योंकि उन्हें यह शक्ति सौंपी जाएगी।

सरदार अच्छर सिंह छीना- इसका मतलब यह है कि पंच उस व्यक्ति के लिए एहसान की तलाश करना शुरू कर देंगे जिसने इस शक्ति के साथ निवेश किया है। यह वैसा ही होगा जैसा कि इस सभा के सदस्य उस व्यक्ति के पक्ष में जीतने की कोशिश कर रहे हैं * जिसके पास इस तथ्य के बावजूद उन्हें सदस्यता से हटाने का अधिकार हो सकता है कि वे जनता द्वारा चुने गए थे। इसी तरह, ये पंच सरकार की इच्छाओं का अधिक ध्यान रखेंगे। इसलिए, महोदय, मैं निवेदन करना चाहता हूं कि/उन्हें इस धारणा से भ्रमित नहीं होना चाहिए कि इस विधेयक को पारित करके वे राम राज्य स्थापित करने में सक्षम होंगे। उन्हें यह गलतफहमी भी नहीं होनी चाहिए कि इस विधेयक के माध्यम से वे लोगों को कम्युनिस्ट बनने से रोकने में सफल होंगे। दूसरी ओर, वे सभी कम्युनिस्ट बन जाएंगे।

स्थानीय सरकार के मंत्री- अध्यक्ष महोदय, मैं यह बताना चाहता हूं कि माननीय सदस्य जो अभी-अभी सभा के कब्जे में थे, गलत हैं। एक पंच को हटाने के लिए कुछ अधिकार के अभाव में, जो लगन से काम नहीं करता है, वह पंचायत काफी बेकार हो जाएगी। इस कारण से, सरकार के पास उन्हें हटाने की शक्ति होनी चाहिए।

सरदार अच्छर सिंह छीना- अध्यक्ष महोदय, मैं भी नहीं चाहता कि जो पंच अच्छा काम नहीं करता है, उसे ऐसा नहीं होना चाहिए। निकाला। मेरी राय में ऐसे पंच को हटा दिया जाना चाहिए। किसी पंच को हटाने की शक्ति सरकार के पास नहीं होनी चाहिए, बल्कि यह मतदाताओं के पास होनी चाहिए जो उसे चुनते हैं। यदि सरकार के पास यह शक्ति है तो पंचायतें अच्छी तरह से कार्य नहीं कर पाएंगी। इसके अलावा, उस स्थिति में पंचायत अधिकारी लोगों के बीच विभाजन पैदा करने की स्थिति में होंगे और जिस पूरे उद्देश्य के साथ यह संस्था शुरू की जा रही है, उसे नष्ट कर दिया जाएगा। सरकार को उस पंचायत को भंग करने का अधिकार नहीं दिया जाना चाहिए जिसे लोगों द्वारा चुना गया है। लोगों को उन पंचों को हटाने की शक्ति होनी चाहिए, जो उनकी राय में अच्छी तरह से काम नहीं करते हैं, क्योंकि उन्हें उन्हें चुनने के लिए अधिकृत किया गया है।"

9) विधानसभा में उपर्युक्त चर्चा से यह देखा जाएगा कि दो दृष्टिकोण-बिंदु थे; एक सरदार अच्छर सिंह छीना का और दूसरा स्थानीय सरकार मंत्री का। श्री छीना का विचार यह था कि यद्यपि विधेयक में ऐसे पंच को हटाने की शक्ति होनी चाहिए जो अच्छा काम नहीं करता है, लेकिन यह शक्ति सरकार के पास नहीं होनी चाहिए। ऐसा प्रतीत होता है कि मूल सुझाव पंचायत अधिकारियों द्वारा निर्वाचित पंचों को हटाने के लिए विधेयक में एक प्रावधान करने का था। प्रारंभिक आपत्ति उस खंड के बारे में थी। जब स्थानीय सरकार के मंत्री ने बार-बार दोहराया कि एक पंच को हटाने की शक्ति सरकार के पास निहित होने जा रही है, तो श्री छीना ने अभी भी अपनी आपत्ति में जोर दिया क्योंकि उनके द्वारा महसूस की गई मूल कठिनाई यह थी कि एक निर्वाचित पंच को हटाने की शक्ति मतदाताओं के पास होनी चाहिए जिसने उन्हें चुना था। और उन्होंने सोचा कि अगर सरकार के पास पंच को हटाने की शक्ति होगी तो पंच अच्छी तरह से काम नहीं कर पाएंगे। इस विषय पर श्री छीना के अंतिम भाषण के अंत में बहुत जोर दिया गया है, जिसमें उन्होंने स्पष्ट रूप से कहा था कि सरकार को लोगों द्वारा चुनी गई पंचायत को भंग करने में सक्षम होने का अधिकार नहीं दिया जाना चाहिए, और केवल लोगों को उन पंचों को हटाने की शक्ति होनी चाहिए जो

उनकी राय में अच्छी तरह से काम नहीं करते हैं क्योंकि उन्हें उन्हें चुनने के लिए अधिकृत किया गया है। यह स्पष्ट है कि उपर्युक्त चर्चा के दौरान सरकारी तंत्र के विभिन्न स्तरों के बीच यदि कोई अंतर किया जा रहा था तो वह एक पंचायत अधिकारी और सरकार के बीच था। एक स्तर पर यह भी संकेत दिया गया था कि सरकार का अर्थ निदेशक या सहायक निदेशक हो सकता है। उपर्युक्त चर्चा में धारा 102 के अधीन अपने कार्यों को उपायुक्त को सौंपने की सरकार की शक्ति पर आपत्ति उठाए जाने के बारे में कुछ भी नहीं है। उपायुक्त कोई स्थानीय अधिकारी नहीं है। पंजाब सामान्य खंड अधिनियम की धारा 2 के खंड (14) के अनुसार, उपायुक्त का अर्थ है किसी जिले के सामान्य प्रशासन के प्रभारी मुख्य अधिकारी। वह राज्य सरकार सचिवालय में उप सचिव के रूप में एक जिम्मेदार अधिकारी है जिसके आदेशों को कार्य के नियमों के अनुसार सरकार के आदेश के रूप में माना जाता है। वास्तव में, जिलों के उपायुक्तों और राज्य सरकार सचिवालय में उप सचिवों के पद परस्पर परिवर्तनीय होते हैं और यह सामान्य ज्ञान का विषय है कि दोनों कार्यालयों के बीच पारस्परिक स्थानान्तरण भारतीय प्रशासनिक सेवा के सदस्यों के बीच होते हैं। . यह श्री सरवन सिंह और अन्य मामले में देखा गया है। पटियाला के अतिरिक्त उपायुक्त और अन्य, (5) कि एक जिले का सामान्य प्रशासन किसी विशेष जिले में कई अधिकारियों द्वारा किया जा सकता है, लेकिन उनमें से एक और केवल एक ही सामान्य प्रशासन का प्रभारी मुख्य अधिकारी हो सकता है, और यह कि 'प्रमुख' शब्द प्रमुख, प्रिंसिपल, उच्चतम, प्रथम या उत्कृष्ट को दर्शाता है। पंचायतें ग्रामीण स्तर पर कार्य करती हैं। विभिन्न गांव और शहर एक उप-विभाजन बनाते हैं। एक जिले में सभी उप-मंडल उपायुक्त के अधीन होते हैं। इसलिए, किसी जिले का उपायुक्त एक महत्वहीन अधिकारी या प्राधिकारी नहीं है। वह वास्तव में राज्य सरकार में कार्यकारी अधिकारियों के पदानुक्रम में काफी ऊपर है। राज्य का वास्तविक प्रशासन विभिन्न उपायुक्तों के हाथों में विभाजित है। वे जिम्मेदार अधिकारी हैं और यह तर्क नहीं दिया जा सकता है कि सरकार ने अधिनियम की धारा 102 (2) के तहत अपने कार्यों को किसी छोटे से छोटे हिस्से को सौंपने में जिम्मेदारी की भावना के बिना काम किया है। बी. वीरास्वामी और अन्य मामले में आंध्र प्रदेश राज्य और अन्य, (6), पूर्ण पीठ के समक्ष प्रश्न यह था कि क्या राज्य सरकार क्षेत्रीय परिवहन अधिकारी को मोटर वाहन अधिनियम, 1939 की धारा 48-ए, 51-ए और 58-ए के तहत शक्तियों का प्रयोग करने और राज्य परिवहन प्राधिकरण के कार्यों का निर्वहन करने के लिए अधिकृत कर सकती है। उस प्रश्न का उत्तर देते हुए पूर्ण पीठ ने कहा कि राज्य सरकार क्षेत्रीय परिवहन अधिकारी को शक्तियों का प्रयोग करने और राज्य परिवहन प्राधिकरण के कार्यों का निर्वहन करने के लिए अधिकृत कर सकती है क्योंकि यह धारणा है कि सरकार ईमानदारी से और नियमों के अनुसार अपने कर्तव्यों का निर्वहन करेगी कानून का उल्लंघन और यह तर्क नहीं दिया जा सकता है कि जहां प्रत्यायोजन की शक्तियां सरकार में निहित हैं, उसका दुरुपयोग किया जाएगा।

10) इसी प्रकार इस प्रश्न पर हमारे समक्ष तर्क प्रस्तुत किए गए थे कि क्या संबंधित कानून अधिनियमित करने वाले विधानमंडल की मंशा का पता लगाने के उद्देश्य से विधान सभा वाद-विवाद के संदर्भ की अनुमति देना न्यायालय के लिए खुला है। मुझे उन तर्कों का उल्लेख करना बिल्कुल अनावश्यक प्रतीत होता है क्योंकि अब यह स्थापित कानून है कि विधान सभा की बहस को कम से कम ऐतिहासिक बैक-ग्राउंड और पर्यावरणीय परिस्थितियों का पता लगाने के उद्देश्य से अदालत के समक्ष उद्धृत किया जा सकता है जिसमें कानून बनाया गया था। हमारे समक्ष उल्लिखित विधान सभा वाद-विवाद में हम किसी विधायी आशय को नहीं समझ पाए हैं जो यह संकेत दे सके कि विधायिका का यह कभी इरादा नहीं था कि सरकार अधिनियम की धारा 102 की उपधारा (2) के अधीन अपने कार्यों को धारा 95 की उपधारा (1) के अधीन सरकार को प्रदत्त

प्रत्यायोजन की व्यक्त शक्ति का प्रयोग करते हुए उपायुक्त को सौंप सकती है। इसलिए, श्री गोपी चंद का दूसरा तर्क भी विफल हो जाता है।

11) याचिकाकर्ता के वकील की अंतिम दलील यह थी कि पंच को हटाने की शक्ति व्यक्तिगत प्रकृति की न्यायिक या अर्धन्यायिक शक्ति है, और इस तरह की शक्ति के प्रत्यायोजन को अधिकृत करने वाला कोई कानून कभी नहीं बनाया जा सकता है। दूसरे शब्दों में यह तर्क दिया गया था कि यदि कोई शक्ति किसी विशेष प्राधिकरण में निहित है, तो उसका प्रतिनिधिमंडल उस प्राधिकरण के रैंक के प्रतिनिधिमंडल के बराबर होगा और कोई भी कानून उपायुक्त को सरकार बनाने की अनुमति नहीं देता है। वकील ने इस संबंध में दिल्ली परिवहन उपक्रम (नगर निगम के) नई दिल्ली के प्रबंधन बनाम श्री बी. बी. एल. हेडे और एक अन्य (7) मामले में दिल्ली उच्च न्यायालय की पूर्ण पीठ के फैसले में की गई कुछ टिप्पणियों पर भरोसा किया। उस मामले में दिल्ली उच्च न्यायालय के समक्ष जो सवाल उठा था वह यह था कि जबकि दिल्ली नगर निगम अधिनियम की धारा 96 (1) में प्रावधान था कि प्रत्येक नगरपालिका अधिकारी या प्रत्येक नगरपालिका कर्मचारी विभागीय नियमों या कदाचार के किसी भी उल्लंघन के लिए अपनी वेतन वृद्धि या पदोन्नति को रोकने या निंदा करने, रैंक में कमी करने आदि के लिए उत्तरदायी होगा। आदि, आयुक्त में निहित उक्त शक्ति उक्त अधिनियम की धारा 491 के तहत अपने अधिकार का प्रयोग करते हुए उसके द्वारा प्रत्यायोजित नहीं की जा सकती है, जो निम्नानुसार है:

> "आयुक्त आदेश द्वारा यह निर्देश दे सकता है कि इस अधिनियम द्वारा या उसके अधीन उसे प्रदत्त कोई शक्ति या कोई कर्तव्य, ऐसी परिस्थितियों में और ऐसी शर्तों के तहत, जो आदेश में निर्दिष्ट किया जा सकता है, आदेश में निर्दिष्ट किसी नगरपालिका अधिकारी या अन्य नगरपालिका कर्मचारी द्वारा भी प्रयोग और पालन किया जाएगा।"

धारा 95 (1) के परंतुक में स्पष्ट रूप से निगम के किसी भी अधिकारी या अन्य कर्मचारी को रैंक में कमी, अनिवार्य रूप से सेवानिवृत्त, हटाए गए या बर्खास्त करने पर प्रतिबंध है। इस सवाल का जवाब नहीं दिया गया कि क्या उस मामले में प्रतिवादियों को नियुक्त करने वाले आयुक्त दिल्ली अधिनियम की धारा 491 के तहत अपनी शक्ति का प्रयोग करते हुए प्रतिवादियों को रैंक में कम करने की अपनी शक्ति को किसी अधीनस्थ प्राधिकारी को सौंप सकते हैं। उस फैसले में कही गई कोई भी बात हमारी राय में याचिकाकर्ता के लिए कोई लाभ नहीं हो सकती है क्योंकि अधिनियम की धारा 95 (1) में कोई निषेध नहीं है जो दिल्ली अधिनियम की धारा 95 (1) के निषेधात्मक परंतुक की प्रकृति का हिस्सा बन सकता है।

12) दिल्ली उच्च न्यायालय के उपर्युक्त निर्णय को सुप्रीम कोर्ट के उनके लॉर्डशिप द्वारा बरकरार रखा गया, जबकि 6 सितंबर, 1972 को दिल्ली परिवहन उपक्रम (1971 की सिविल अपील 1518) के प्रबंधन की अपील को खारिज कर दिया गया। उच्चतम न्यायालय के निर्णय के निम्नलिखित पारित होने पर ही श्री गोपी चंद ने भरोसा करने की मांग की है:-

> "इसलिए, यह स्पष्ट है कि कानून द्वारा किसी कर्मचारी को दी गई सुरक्षा को क़ानून द्वारा अधिकृत नियमों और विनियमों द्वारा रद्द नहीं किया जा सकता है। दूसरे शब्दों में, निगम द्वारा बनाया गया कोई भी विनियमन जो सहायक महाप्रबंधक को प्रतिवादी नंबर 2 को सेवा से हटाने के लिए अधिकृत करता, प्रतिवादी नंबर 2 के लिए निष्क्रिय हो जाता क्योंकि उसका नियुक्ति प्राधिकारी महाप्रबंधक (परिवहन) था। अब प्रश्न यह है कि यदि निगम स्वयं किसी विनियम द्वारा प्रतिवादी संख्या 2 को संविधि द्वारा दिए गए उपरोक्त संरक्षण को नष्ट नहीं कर सकता था, तो यह कहना उचित होगा कि महाप्रबंधक ने निगम अधिनियम की धारा 491 और 504 के तहत सहायक महाप्रबंधक को अपने कार्यों को सौंपने के आदेश द्वारा सुरक्षा को नष्ट कर सकता है। चूंकि महाप्रबंधक (परिवहन) निगम का एक अधिकारी है और निगम के अधीनस्थ है, इसलिए यह कहना होगा कि जो काम निगम एक विनियमन द्वारा नहीं कर सकता है, वह निगम का एक अधिकारी केवल

सहायक महाप्रबंधक को अपने कार्यों को सौंपकर कर सकता है। स्थिति हास्यास्पद दिखेगी। कानून में सही स्थिति यह है कि धारा 491 और 504 को एक साथ पढ़ा जाता है, जो महाप्रबंधक (परिवहन) को अपनी शक्तियों और कार्यों को एक अधीनस्थ को सौंपने के लिए अधिकृत करता है, लेकिन उन्होंने अपने रैंक के प्रतिनिधिमंडल को अधिकृत नहीं किया। नियुक्ति और निष्कासन के मामलों में जो शामिल है वह कर्मचारी की स्थिति और रैंक और कार्रवाई करने वाले प्राधिकरण की स्थिति और रैंक है। जब धारा 95 की उपधारा (1) के परंतुक में कहा गया है कि एक अधिकारी और कर्मचारी को उस प्राधिकारी द्वारा बर्खास्त नहीं किया जाएगा जिसके द्वारा उसे नियुक्त किया गया था, तो समन्वय रैंक का होता है न कि कार्यों का। परंतुक नियुक्ति प्राधिकारी के किसी भी अधीनस्थ पर किसी कर्मचारी को सेवा से हटाने या बर्खास्त करने पर प्रतिबंध लगाता है और इसलिए, उच्च न्यायालय ने वर्तमान मामले में सही कहा कि सहायक महाप्रबंधक (परिवहन) द्वारा प्रतिवादी संख्या 2 को हटाना अवैध था। श्री छागला ने तब तर्क दिया कि प्रतिनिधिमंडल के कारण, सहायक महाप्रबंधक महाप्रबंधक का एजेंट बन गया था और सहायक महाप्रबंधक के कार्य को स्वयं महाप्रबंधक का कार्य माना जाना चाहिए। हम यहां एजेंसी के कानून से चिंतित नहीं हैं। कम प्राधिकारी द्वारा पद से हटाने पर रोक लगाने वाले सांविधिक निषेध में यह अंतर्निहित है कि नियुक्ति प्राधिकारी को पद से हटाने के प्रश्न पर व्यक्तिगत रूप से अपना दिमाग लगाना होता है और वह ऐसा कार्य नहीं सौंप सकता है। चूंकि जो प्राधिकरण किसी कर्मचारी को हटा सकता है, वह नियुक्ति प्राधिकारी या कार्यालय में उसका वरिष्ठ है, इसलिए इस प्रकार प्रदान की गई सुरक्षा को एजेंसी की अवधारणाओं को आयात करके नष्ट नहीं किया जा सकता है।"

उपर्युक्त परिच्छेद में प्रत्यायोजन पर आपत्ति फिर से धारा 95 (1) के परंतुक पर आधारित है, जिसमें धारा 95 की उप-धारा (1) के दायरे के तहत आयुक्त में निहित शक्तियों के प्रत्यायोजन के खिलाफ पूर्ण निषेध है, जो किसी कर्मचारी के संबंध में है, जिसे उसके द्वारा नियुक्त किया गया था। हटाने के प्रश्न पर प्राधिकारी द्वारा व्यक्तिगत रूप से अपना दिमाग लगाने की आवश्यकता का संदर्भ, और इसलिए, ऐसे किसी भी कार्य के प्रत्यायोजन की अवांछनीयता का संदर्भ फिर से उसी वाक्य में सीधे तौर पर वैधानिक निषेध से जुड़ा हुआ है जो कम प्राधिकारी द्वारा हटाने पर रोक लगाता है। अधिनियम की धारा 95 में ऐसा कोई निषेध प्रावधान नहीं है।

13) वास्तव में हमें ऐसा प्रतीत होता है कि धारा 102(2) के अंतर्गत सरकार के कार्यों को इस धारा में ही निचले प्राधिकारियों को सौंपने के लिए विधायी नीति के आंतरिक साक्ष्य हैं। इस धारा को फैसले के पहले हिस्से में पहले ही उद्धृत किया जा चुका है। जबकि उप-धारा (2) के खंड (ए) से (सी) उन खंडों में निर्धारित वस्तुनिष्ठ परीक्षणों पर किसी पंच को हटाने की सरकार की शक्तियों से संबंधित हैं, जो संतुष्ट हैं, उप-धारा (2) के खंड (डी) और (ई) के तहत हटाने की शक्तियां सरकार की राय पर आधारित हैं। उन खण्डों में, अर्थात् खंड (घ) और (ङ) में यह विशेष रूप से कहा गया है कि एक पंच, जो सरकार की राय में "या उस अधिकारी का, जिसे सरकार ने हटाने की अपनी शक्तियां प्रत्यायोजित की हैं" अपने कर्तव्यों के निर्वहन में कदाचार का दोषी रहा है या जिसका पद पर बने रहना "सरकार या उस अधिकारी की राय में है जिसे सरकार ने हटाने की अपनी शक्तियां प्रत्यायोजित की हैं" अवांछनीय है। जनता के हित। यदि विधायी आशय यह था कि धारा 102 की उपधारा (2) के तहत किसी पंच को हटाने की शक्ति प्रत्यायोजित किए जाने की उम्मीद नहीं है, तो उस अधिकारी का कोई संदर्भ नहीं दिया जा सकता था, जिसे सरकार ने उसी धारा के खंड (डी) और (ई) में हटाने की अपनी शक्ति प्रत्यायोजित की है। हमें लगता है कि यह महत्वपूर्ण मोड़ है जो याचिकाकर्ता की ओर से दिए गए भ्रामक तर्क को पूरी तरह से खारिज करता है। धारा 102(2) के प्रावधानों को इस न्यायालय की खंडपीठ द्वारा पियारे लाई बनाम भारतीय मामले में पहले ही अंतर-विकृत और वैध करार दिया जा चुका है। होशियारपुर

के उपायुक्त और अन्य (8) और न ही उस प्रावधान की वैधता या उप-धारा में प्रतिनिधिमंडल के संदर्भ पर हमारे सामने हमला किया गया है।

14) मामले से अलग होने से पहले हम यह भी देख सकते हैं कि याचिकाकर्ता के वकील ने गोवा, दमन और दीव के न्यायिक आयुक्त के करचोरेम बनाम गोवा, दमन और दीव के उपराज्यपाल (9) की ग्राम पंचायत के फैसले का हवाला दिया, यह तर्क देने के लिए कि धारा 102 (2) के तहत सरकार की शक्ति है। यह अधिनियम उपराज्यपाल की शक्ति की तरह व्यक्तिगत शक्ति है जिसे अपने विवेक से प्रयोग किया जा सकता है, और इसलिए, इसे प्रत्यायोजित नहीं किया जा सकता है। यह तर्क शायद ही किसी गंभीर ध्यान देने योग्य है क्योंकि सरकार उपराज्यपाल की तरह एक व्यक्ति नहीं है, और अधिनियम के प्रावधान स्वयं इंगित करते हैं कि विधायिका धारा 102 (2) के तहत सरकार की शक्ति को किसी निचले अधिकारी को प्रत्यायोजित करने का इरादा रखती है। यही बात रामदत्त और अन्य मामले में राजस्थान उच्च न्यायालय के फैसले के संदर्भ में विद्वान वकील द्वारा दिए गए संदर्भ पर भी लागू होती है। राजस्थान राज्य और अन्य (10) जिनके आधार पर यह तर्क दिया गया था कि पंचायत एक स्थानीय सरकार है और सरकार को स्थानीय सरकार को हटाने के लिए अधिकृत नहीं किया जा सकता है। इस तर्क में बड़ी संख्या में भ्रांतियां हैं। भले ही पंचायत को स्थानीय सरकार माना जाता है, लेकिन पंचायत के प्रत्येक पंच या सरपंच को स्थानीय सरकार नहीं कहा जा सकता है। इसके अलावा, राजस्थान के मामले में सवाल विधायी नीति का था। अधिनियम में पंजाब विधानमंडल की नीति हमारे सामने स्पष्ट और स्पष्ट है। फैजाबाद के सदर के सब-डिविजनल ऑफिसर बनाम शंभू नारायण सिंह (11) और वाइन बनाम नेशनल डॉक लेबर बोर्ड (12) मामले में सुप्रीम कोर्ट के फैसले पर किसी भी विस्तार से विचार करने की आवश्यकता नहीं है।

15) श्री भूप सिंह जो संबंधित रिट याचिका (1974 का सीडब्ल्यूपी 4776) में याचिकाकर्ता के वकील हैं- चिरंजी लाई बनाम चिरांजी लाई हरियाणा राज्य और अन्य) जो इस याचिका के साथ हमारे द्वारा सुने गए मामलों में से एक है, ने श्री गोपी चंद के सभी तर्कों को स्वीकार कर लिया और आगे प्रस्तुत किया कि यदि उपायुक्त को धारा 102 (2) के तहत सरकार की शक्ति का प्रत्यायोजन कानूनी माना जाता है, तो इसे अधिनियम की धारा 95 की उप-धारा (1) के स्पष्ट प्रावधान के कारण माना जाना चाहिए कि उक्त शक्ति यहां तक कि सरकार द्वारा उप-विभागीय अधिकारी को भी प्रत्यायोजित किया जा सकता है, और यह वास्तव में विसंगतिपूर्ण होगा कि जबकि जांच का आदेश देने की मुख्य शक्ति उप-विभागीय अधिकारी में निहित हो सकती है, ऐसी जांच के दौरान पंच को निलंबित करने की कम महत्वपूर्ण नियमित शक्ति को अधिनियम की धारा 102 की उप-धारा (1) द्वारा उपायुक्त पर छोड़ दिया जाए, जिसके आगे के प्रत्यायोजन को धारा 95 की उप-धारा (5) के परंतुक द्वारा निषिद्ध किया गया है अधिनियम। ऐसा कुछ नहीं हुआ है, और हमें अकादमिक प्रश्नों का उत्तर देने के लिए नहीं बुलाया गया है जो उत्पन्न नहीं हुए हैं। न ही श्री भूप सिंह द्वारा उठाए गए जटिल प्रश्न का उस सटीक प्रश्न से कोई संबंध है जिसे इस पीठ को भेजा गया है।

16) पूर्वगामी कारणों के लिए हम हमें संदर्भित प्रश्न का उत्तर सकारात्मक में देते हैं। यह मामला अब उस पीठ के पास वापस जाएगा जिसने मूल रूप से इस पर सुनवाई की (और इसे हमारे पास भेजा) ताकि कानून के अनुसार फैसला किया जा सके।

आर. एस. नरूला, सी.जे.-मैं सहमत हूँ

अस्वीकरण : स्थानीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के सीमित उपयोग के लिए है ताकि वह अपनी भाषा में इसे समझ सके और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यवहारिक और आधिकारिक उद्देश्यो के लिए निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रमाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य के लिए उपयुक्त रहेगा ।

हिमांशु जांगड़ा

प्रशिक्षु न्यायिक अधिकारी